Original Article
ISSN (Online): 2582-7472

ShodhKosh: Journal of Visual and Performing Arts
April 2024 5(4), 1609–1611

DALIT DISABLED WOMEN'S DISCOURSE: AN ANALYTICAL STUDY

दलित विकलांग स्त्री-विमर्श एक विष्लेषणात्मक अध्ययन

Dr. Om Mishra [1]

[1] Dr. Bhimrao Ambedkar College, Faculty of Arts, Hindi/Journalism Department, University of Delhi, Delhi

DOI
10.29121/shodhkosh.v5.i4.2024.4759

Funding: This research received no specific grant from any funding agency in the public, commercial, or not-for-profit sectors.

Copyright: © 2024 The Author(s). This work is licensed under a Creative Commons Attribution 4.0 International License.

With the license CC-BY, authors retain the copyright, allowing anyone to download, reuse, re-print, modify, distribute, and/or copy their contribution. The work must be properly attributed to its author.

OPEN ACCESS

ABSTRACT

English: In Hindi literature, since the last few years, women's discourse,1 Dalit discourse2 and tribal discourse3 are emerging as new discourses. On one hand, there is an opportunity to bring the marginalized community into the mainstream and on the other hand, Hindi literature has also flourished. Sahila is the mirror of society, so it is certain that the reflection of women, Dalits, tribes and other communities should be visible in it. Since the last few years, the concept of social inclusion4 has forced us to think about the most neglected people of the society. As a result, a new thinking has been formed towards Dalits, women, tribal people as well as disabled people. Whether it has developed as a result of protest or as a result of judicial process or as a result of the concept of social justice, it has succeeded to a great extent in bringing the people of Shamia into the mainstream. It has come to the fore that these people should also be given equal access to the resources of the country and be brought into the mainstream and contribute equally to the development of the country step by step.

Hindi: हिन्दी साहित्य में पिछले वर्षों से स्त्री विमर्श,1 दलित विमर्श2 तथा जनजातीय विमर्श,3 नये विमशों के रूप में उभर रहे विमर्श हैं। जिसमें एक तरफ उपेक्षित समुदाय हासिये के लोगों की मुख्यधारा में लाने का अवसर मिला है तो दूसरी तरफ हिन्दी साहित्य की श्रीवृद्धि भी हुई है। साहिला समाज का दर्पण है, तो निश्चित हो इसमें स्त्री, दलित, जनजाति, अन्य समाज का प्रतिविम्ब तो दिखाई ही पड़ना चाहिए। पिछले वर्षो से सोशल इन्क्लूजन4 की अवधारणा ने समाज के अति उपेक्षित लोगों के बारे में भी सोचने पर मजबूर कर दिया। परिणाम स्वरूप दलित, स्त्री, जनजाति के लोगों के साथ-साथ विकलांग लोगों के प्रति भी एक नयी सोच बनी है। वह चाहे विरोध के परिणाम स्वरूप या न्यासिक प्रक्रिया के परिणाम स्वरूप या सामाजिक न्याय की अवधारणा के परिणाम स्वरूप विकसित हुई हो, परन्तु उससे शामिए के लोगों को मुख्य धारा में शामिल होने में काफी हद तक सफलता प्राप्त हुई है। इन लोगों को भी देश के संसाधनों के समान उपयोग तथा मुख्यधारा में लाने और देश के विकास में समान रूप से कदम से कदम मिलाकर योगदान देने की बात सामने आई है।

1. प्रस्तावना

हिन्दी साहित्य में पिछले वर्षों से स्त्री विमर्श,1 दलित विमर्श2 तथा जनजातीय विमर्श,3 नये विमशों के रूप में उभर रहे विमर्श हैं। जिसमें एक तरफ उपेक्षित समुदाय हासिये के लोगों की मुख्यधारा में लाने का अवसर मिला है तो दूसरी तरफ हिन्दी साहित्य की श्रीवृद्धि भी हुई है। साहिला समाज का दर्पण है, तो निश्चित हो इसमें स्त्री, दलित, जनजाति, अन्य समाज का प्रतिविम्ब तो दिखाई ही पड़ना चाहिए। पिछले वर्षो से सोशल इन्क्लूजन4 की अवधारणा ने समाज के अति उपेक्षित लोगों के बारे में भी सोचने पर मजबूर कर दिया। परिणाम स्वरूप दलित, स्त्री, जनजाति के लोगों के साथ-साथ विकलांग लोगों के प्रति भी एक नयी सोच बनी है। वह चाहे विरोध के परिणाम स्वरूप या न्यासिक प्रक्रिया के परिणाम स्वरूप या सामाजिक न्याय की अवधारणा के परिणाम स्वरूप विकसित हुई हो, परन्तु उससे शामिए के लोगों को मुख्य धारा में शामिल होने में काफी हद तक सफलता प्राप्त हुई है। इन लोगों को भी देश के संसाधनों के समान उपयोग तथा मुख्यधारा में लाने और देश के विकास में समान रूप से कदम से कदम मिलाकर योगदान देने की बात सामने आई है।

यह सब स्त्री, दलित, जनजातीय आन्दोलनों से सम्भव हो सका है। हालांकि इस प्रक्रिया में न्याय प्रणाली की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। इसी प्रकार सम्पूर्ण विश्व में विकलांगों के प्रति भी लोगों का नजरिया बदला है। उन्हें भी मुख्यधारा में लाया जा रहा है। इसके लिए न्यायिक प्रक्रिया के साथ साथ

सामाजिक आन्दोलनों ने भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। भारतवर्ष में भी विभिन्न आन्दोलनों के फलस्वरूप विकलांगों को समान अवसर सहभागिता को प्राप्ति हुई है। इस सबका प्रतिबिम्ब साहित्य पर भी पड़ा है, क्योंकि साहित्य समाज को गतिविधियों से अछूता नहीं रह सकता। हिन्दी साहित्य में विकलांग स्त्री को जीवनगाथा उसके जीवन के यथार्थी का वर्णन जीवन्त रूप में किया गया है। विभिन्न विकलांग आन्दोलनों के परिणाम स्वरूप हिन्दी साहित्य में पाश्चात्य साहित्य की भांति विकलांग पात्रों पर प्रचुर मात्रा में लेखन कार्य किया गया है। हमारे शोधपत्र का केन्द्र विकलांग स्त्री होने के नाते हम यहां मात्र विकलांग स्त्री की पीड़ाओं, उसके जीवन के कष्टों आदि का वर्णन हिन्दी साहित्य के सन्दर्भ में यहां कर रहे हैं।

स्त्री विषयक लेखन, दलित लेखन, जनजाति लेखन के साथ-साथ हिन्दी साहित्य में विकलांगता विषयक लेखन भी पुष्पित एवं पल्लवित हो रहा है। विकलांग स्त्रियों का जीवन आज कम कठिन नहीं है। वे विकलांग पुरुषों की तुलना में और अधिक शोषण का शिकार हो रही हैं। इस प्रकार के साहित्य में कई स्थलों पर देखा जाता है कि उन्हें जीवन की प्रमुख आवश्यकताओं से भी दूर रखा जाता है। विकलांग युवती के विवाह के लिए अनेक समस्याएं आती हैं। जैसा कि निम्न पंक्तियों से स्पष्ट है ''मि. साइमन ने फिर अपनी बात आगे बड़ाई, बेटी तुम इस पोजीशन में नहीं हो, अब कौन तुमसे विवाह करेगा ?...5

इसी प्रकार पोलियो कहानी की नायिका मणिका का चित्रण करते हुए कहानीकार ने लिखा है-''मणिका जो पोलियोग्रस्त है वह अपनी योग भावनाओं को सन्तुष्ट करना चाहती है परन्तु विकलांग होने के कारण वह अपनी इस भावना की सन्तुष्टि नहीं कर पाती। वह अपने मित्र से कहती है आप मुझे जानते हैं कि मैं क्या चाहती हूं।6 इसी प्रकार आज के विभिन्न समाचारपत्रों में दलित लड़कियों के जिन्दा जला देने की घटनाएं प्रकाशित हो रही हैं ऐसी ही एक घटना जो समाचारपत्रों में छपी थी उसमें एक लड़की जो दलित है और विकलांग भी है। यानी उसका दोहरा शोषण हुआ। घटना अत्यन्त दहला देने वाली है इस विकलांग लड़की को आग में जिन्दा जला दिया गया।7 उसका कारण यह था कि वह दलित थी और इसके साथ-साथ विकलांग और स्त्री भी अतः उसे तीन स्तरीय समस्याओं से जूझना पड़ा। इस प्रकार की घटनाएं अस्मितामूलक विमर्शो में एक नया अध्याय जोड़ती हैं।

कभी-कभी तो विकलांगों के परिजन उनसे अजीब-अजीब प्रश्न पूछने लगते कि उनको दुख होने लगता है। इस प्रकार की एक कहानों में पात्र मारिया के पिता मारिया की शादी के बारे में उससे कहते हैं कि उससे अब कौन विवाह करेगा? इसको सोचने के बाद मारिया को मनोदशा का वर्णन करते हुए कहानीकार ने लिखा है- ष्मारिया चुप है और सोच रही है कि पापा जैकब दूसरे सभी लोग मुझे क्यों विकृत करना चाहते हैं। कोई मेरे साहस, संघर्ष की दाद क्यों नहीं देता? मुझसे अब कोई पहले जैसा बर्ताव क्यों नहीं करता? लोग क्यों चाहते हैं कि मुझ पर दया की जाए, इससे उनकी किस भावना की तृप्ति होती?''8

आज विकलांग पात्र (अन्यथा सक्षम व्यक्ति) स्वावलम्बी एवं परिवारोपयोगी समाजोपयोगी बन रहे हैं। निश्तर खानकाही की कहानी 'आधा जीवन ' पूरा हाथ' को पात्रा गरिमा समाज में एक आदर्श महिला के रूप में सम्मान पाती है। यहां पर भाषा जीवन जीने की भाषा के रूप में दिखाई पड़ती है। एक उदाहरण प्रस्तुत है इन सब लोगों की आंखों में मेरे लिए सहानुभूति और दिया का जो भाव है, उससे मुझे घृणा है। मैं यह सहन नहीं कर सकती कि लोग मुझ पर तरस खायें। चाहे वह पापा ही क्यों न हो।''9

रामदरश मिश्र की कहानी 'सीमा' की भाषा भी एक विकलांग लड़की की पीड़ा को व्यक्त करने में पूर्णतया समर्थ दिखाई देती है-''सीमा10 को लगता है कि किसी ने एक इकतारे को अचानक ही झनझना दिया हो और झनझनाने से पहले ही उसका तार टूट गया हो। उसे दिखाई दे रहा है सामने बिजली के एक तार में एक चिड़िया फंस गयी है। चीं चीं कर फड़फड़ा रही है। सीमा एक अवस करुणा से उसे देख रही है...यह पाती है कि वह एक चिड़िया है, बिजली के तार में उलझी हुई है, चिड़िया ची ही कर ठंडी हो जाती है, मगर वह तो (सीमा) उसी तरह तार से जीवित लटकी हुई है। तमाम चिड़िया आकाश में शोर मचा रही है उस मृत पक्षी को घेरकर। शायद उसके लिए (सीमा) कोई भीड़ न होगी।

दलित होने के साथ-साथ विकलांग होना और भी कष्टदायी है। एक तो दलितत्व का दंश फिर उस पर विकलांगता का देश यानी दोहरी समस्या और इससे भी अधिक समस्या तब होती है जब दलित स्त्री विकलांग हो उसका जीवन नरक हो नरक बन जाता है. उसका विवाह होना आदि समस्याएं यहां तक कि अधिकतर को तो यौनिकता से दूर रखा जाता है। लोगों का मानना हैं कि इन्हें शारीरिक सम्बन्धों की आवश्यकता ही नहीं है। अतः स्पष्ट है कि दलित पुरुष को जीवन में अनेकों कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है, दलित विकलांग पुरुष को और भी अधिक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है और स्त्री को अनेकों संकटों का सामना करना पड़ता और दलित स्त्री को और भी तथा विकलांग दलित स्त्री को दशा का वर्णन करना मुझे हिमालय पर्वत जैसा कठिन प्रतीत होता है। एक विचारक ने लिखा है-''हम कहां जाए.... हमारी संख्या बिखरी होने के कारण हमें राजनीतिक पार्टियों द्वारा कोई भी तवज्जो नहीं दी जाती है। हमारे वोट को भी कोई महत्व नहीं दिया जाता है, न ही अन्य जातिगत समीकरणों के परिणाम स्वरूप जातियों को जो महत्ता दी जाती है वह महत्ता हमें नहीं मिलती। चुनाव के समय भी हमें कोई महत्व नहीं मिलता। विधानसभा एवं लोकसभा के लिए उम्मीदवारों को जो आरक्षण सीटों में मिलता है-आरक्षित सीट, अनारक्षित सीट हमारे लिए भारत में किसी भी क्षेत्र में ग्राम सभा, ग्राम पंचायत, जिला पंचायत, विधायक, सांसद आदि के चुनाव के लिए कोई भी सीट विकलांग तम्मीद के लिए आरक्षित नहीं है।''11 इस प्रकार स्पष्ट है कि विकलांग लोगों को अनेकों समस्याओं का सामना करना पड़ता है। उन्हें सत्ता में भागीदारी नहीं मिल रही है जैसे तैसे विभिन्न कोर्ट केसी के परिणाम स्वरूप कुछ सुविधाएं प्राप्त हुई हैं परन्तु वह दाल मैं नमक के समान है।

संदर्भग्रंथ सूची

स्त्री विमर्श, अनामिका सिंह, पृष्ठ-20
दलित साहित्य का इतिहास, मोहनदास नैमिशराय, पृष्ठ-20
जनजाति विमर्श, गंगासहाय मीणा, पृष्ठ-12
शिक्षा के समाजशास्त्रीय आधार, डॉ. सरोज, पृष्ठ-6
आधा हाथ ‘ पूरा जीवन निशत्तर खानकाही, पृष्ठ-16
पोलियो, कुलदीप बग्गा, पृष्ठ-20